Bodhi International Journal of
Research in Humanities, Arts and Science

Vol. 10 Special Issue 1 December 2025
E-ISSN: 2456-5571

वार्धक्य: कुछ निजी अनुभव

डॉ ब्लेसी वी

सहायक प्राध्यापक , सैंट जोसफ'स कॉलेज फॉर वुमेन, आलप्पुला

Open Access

Manuscript ID:
BIJ-SPL1-DEC25-ML-068

Subject: Hindi

Received : 07.08.2025
Accepted : 08.09.2025
Published : 31.12.2025

DOI: 10.64938/bijsi.v10si1.25.Dec068

Copy Right:

This work is licensed under
a Creative Commons Attribution-
ShareAlike 4.0 International License.

सार

साहित्य हमेशा अपने समय की गतिविधियों और समस्याओं को बिना पर्दे के हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं| समाज में स्थित समस्याओं को बड़े आसानी से जनता तक पहुँचने की एक सशक्त माध्यम है कहानी| वर्तमान समय के हाशिएकृत पहलुओं में एक प्रमुख हैं-वृद्धजन की समस्या| बढ़ते उपभोक्तवादी दृष्टिकोण के कारण परिवार में बूढ़े-बुजुर्ग आजकल अकेले और उपेक्षित पड़ रहे है| साथ ही इन लोगों को कई प्रकार के शारीरिक, मानसिक, और आर्थिक शिथिलताओं से भी गुजरना पड़ता हैं| इन सभी समस्याओं का चित्रण इस लेख में करने का प्रयास किया गया हैं|

कीवर्डस: वृद्धजन, बूढ़ापा, शारीरिक-मानसिक-आर्थिक क्षमता, निराशा, अवसाद, असंतोष, अकेलापन, भय, संत्रास, मायूसी, भावनात्मक उथल-पुथल, संयुक्त परिवार, युव-पीढ़ी, use and throw culture, generation gap, नकारात्मक दृष्टिकोण, रिटाइरमेंट, वृद्धाश्रम |

सामग्री:

सालों बाद जब अपने ही शोध विषय पर कुछ लिखने को है तो एक रुकावट सी महसूस होती है| यह नहीं की लिखने को कुछ नहीं हैं,बल्कि लिखना तो आसान है| कोई भी विषय हमारेलिए "विषय" तब बनती है जब वह हमारी खुदकी समस्या बन जाती हैं| जब समस्या पैदा होती हैं तो उससे निपटने की कोशिश हम करते हैं,उस समस्या का हल हम निकालने लगते हैं, और तब जाकर पता चलता हैं कि लिखकर उपाधि पाना अलग और लिखे हुए बातों को समझकर अपने ही ज़िंदगी में निभाना अलग होता हैं|

मैंने अपना शोध कार्य "समकालीन हिन्दी कहानियों में वृद्ध जीवन का यथार्थ" विषय पर किया था| विषय तो बड़ा गंभीर हैं,और जब यह खुद की समस्या बन जाती है तो मामला अतिगंभीर बन जाती है| तब जाकर लगने लगा कि क्या इस विषय पर आगे कुछ भी लिखकर इंसाफ कर पाऊँगी| तो ठीक लगा कि अपने अनुभवों से मिलकर लिखु ताकि यह लेख केवल लेख मात्र न रहकर उसके आगे कुछ समझने योग्य भी रहे क्योंकि ये समस्याएँ केवल कहानियों में ही नहीं बल्कि हमारे ज़िंदगी में मौजूद हैं और अनुभव ही सबसे बड़ा गुरु है,अनुभव ही मनुष्य को बहत्तर बनाता हैं|

वार्धक्य.... किस प्रकार हम इसे निर्वाचित कर सकते है? एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका के अनुसार- "Old age also called senescence, in human being, the final stage of the normal life span."अर्थात –"बूढ़ापा, जिसे वार्धक्य भी कहा जाता हैं,मानव के सामान्य जीवन काल का अंतिम पड़ाव हैं" | सामान्य भाषा में कही जाए तो इसे अपने जीवन काल के अंतिम सच का आखिरी पायदान कह सकते हैं| इस अवस्था तक पहूंचकर मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक क्षमता कमजोर पड़ जाती है|'अकेले होते लोग' पुस्तक में स्वाति तिवारीजी ने कुछ

इस प्रकार वार्धक्य को परिभाषित किया है-"वृद्धावस्था को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया हैं जिसे सम्पूर्ण शारीरिक क्षमताओं में उत्तरोत्तर कमी से आँका जाता हैं" |(स्वाति तिवारी,अकेले होते लोग,पृ.31)

मेरे घर में इस पड़ाव से गुज़रते दो व्यक्ति हैं-एक मेरी माँ और दूसरी मेरी सासूमाँ| बूढ़ापे की सारी शिथिलताएं-शारीरिक,मानसिक एवं आर्थिक कमज़ोरियाँ उनमें नज़र आती हैं, जिसमें शारीरिक और मानसिक का खास जिक्र करना आवश्यक है| शारीरिक अवस्थाएँ जैसे नींद की कमी, आँखों का धुंधुलापन, थकावट,यादाश खोना, आदि तो उनमें स्वाभाविक हैं|उनका नींद नहीं आना हमारेलिए भी एक बहुत बड़ी समस्या बन चुकी हैं क्योंकि वे ज्ञानरंजन की कहानी 'पिता' के पिताजी समान हैं जो रात भर जागते रहते हैं और कुछ न कुछ करते रहते हैं-"पिता ने कई बार करवट बदली| फिर शायद चैन की उम्मीद में पाटी पर बैठ पंखा झूलने लगे है|"(गिरिराज शरण,पिता,वृद्धावस्था की कहानियाँ,पृ.44)बुजुर्गों के इस तरह से जागे रहने की अपनी वजह होती हैं जिसे अक्सर हम समझ नहीं पते हैं या समझने की कोशिश नहीं करते हैं| उलटा हम उन्हें ही डांटते है जो उन्हें मानसिक रूपसे भी कमजोर कर देती है|

मुझे अपनी अम्मा से सबसे ज़्यादा तकलीफ उनकी ऊँचा सुनने से है| एक बात को दस बार दुहराओ तब जाकर उन्हें कुछ सुनाई पड़ती है और हमारे बीच लड़ाई तब बढ़ती है जब सुनाई पड़ने केलिए वे टेलिविजन का आवाज़ ऊंची रखती हैं| इस लड़ाई की वजह से आजकल वह कम ही उस ओर आती हैं| हमारे बीच की इस छोटी-मोटी लड़ाई ने हम दोनों के बीच एक प्रकार का तनाव पैदा कर दिया है जिसका असर मुझसे ज़्यादा उनपर ही पड़ा है| एक प्रकार की निराशा,अवसाद,असंतोष आदि उनमे पैदा हो गयी है| इसी वजह से उनमें चिड़चिड़ापन अधिकमात्र में होने लगी है जिसके कारण परिवार और समाज के प्रति उनका व्यवहार अरुचिकर बन गया है| देखा जाए तो इसका गुन्हेगार हम ही होते है जो उनके तकलीफ़ों को समझने में भूल कर बैठते है|

किसी भी मनुष्य के जीवन का बुनियादी पहलू परिवार है| उम्र के बढ़ने के साथ व्यक्ति के पारिवारिक जीवन में भी बदलाव आने लगते हैं| वर्तमान समय में जहाँ परिवार का स्वरूप बिलकुल बादल गया है, वहीं परिवारों में वृद्धजन अकेलेपन से ग्रस्त हैं क्योंकि नयी पीढ़ी अपने-अपने कामों में व्यस्त रहते हैं| पुरानी पीढ़ी के साथ वक्त गुजरने केलिए उन्हे समय नहीं मिलता| इस अवस्था में जीवन साथी का गुज़र जाना अथवा एक दूसरेसे बिछुड़कर रहना, पारिवारिक सत्ता नयी पीढ़ी के हाथों आना, बच्चों का दूर रहना आदि उनमें एक प्रकार का भय, संत्रास,उदासीनता और मायूसी पैदा कर देती है,जो उन्हे मानसिक तौर पर कमज़ोर बना देती हैं|

मेरी सासूमाँ बहुत कम उम्र में ही विधवा बन जायी थी| अपने अच्छे उम्र में बड़े प्रयत्न के साथ उन्होंने बच्चों को काबिल बनाया| जो स्त्री एक समय में जीविनी चलाने में इतनी व्यस्त रही, आज उनको करने केलिए कुछ खास नहीं बचा हैं तो अधिकतर समय वे चिंताओं में फस जाती हैं जिसमें सबसे ज़्यादा फिक्र उन्हे अपनी बीमारियों और मृत्यु को लेकर हैं| उनके अंदर एक प्रकार की भावनात्मक उथल-पुथल हैं जिसकी वजह से उन्हे अपना जीवन हाथों से फिसलता हुआ महसूस होता हैं| उन्हे लगता हैं कि जीवन यात्रा का अंतिम पडाव से होकर वह गुज़र रही हैं और वे शीद्र ही मरने वाली हैं| इस विचार ने उनमें भय उत्पन्न कर दिया हैं| उन्हे लगता हैं कि इस मुकाम तक पहूंचकर अब मृत्यु कभी भी आ सकती हैं|उनकी यहीं नकारात्मक सोच उनके डर को और अधिक बढ़ा देती है|'डर' कहानी में इसी मृत्यु भय से अस्वस्थ एक बूढ़े आदमी का चित्रण बखूबी से हुआ हैं| इस भय के कारण वे घर से बाहर निकलने को तक हिचकते हैं और न अपनी घरवाली को बाहर भेजता हैं| उनके इस विचित्र व्यवहार को देखकर उनकी पत्नी कहती हैं-"तेरे काका सठिया गए हैं| कहते हैं इत्ता सोना लादकर घूमेगी तो लूट-पार में मारी जाओगी| सब अंदर लॉकर में रखवा दिया हैं| अब इस उमर में ये नया डर|"(स्वाति तिवारी,डर,अकेले होते लोग,पृ 103) मेरी सास को भी यही डर अपने को लेकर हैं| वह अपने बीमारी के बारे में भी बहुत अधिक सोचती हैं| इस कारण किसी भी दवा-दारू या डॉक्टर पर उनका मन नहीं टिकता हैं| अपनी बीमारी के इलाज केलिए वे हर तरह की चिकित्सा करते हैं| माधव नागदा की कहानी 'केस नंबर पाँच सौ सोलह' के बूढ़े की तरह वे भी अपनी रोगावस्था से इतनी डरी और निराश रहती है कि बारी-बारी सभी पथियाँ करती रहती हैं| लेकिन उन्हे कभी राहत नहीं मिलती हैं| कहानी के देवप्रसाद कहते है-"उन्होने एलोपैथी कब की छोड़ दी| एक दवा लो, नयी बीमारी तैयार| फिर आयुर्वेदिक चिकित्सा आरंभ की| थोड़ी दिन पहले यह आश्चर्यप्रद लेख पढ़ा कि आयुर्वेदिक भस्में, काढ़े, आसव भी रिएक्शन करते हैं, अब होमेओपथी|"(शीतांशु भारद्वाज, कैस नंबर पाँच सौ सौलह,वृद्धमन कि कहानियां,पृ 54) अधिकतर वृद्धजन आजकल ऐसी स्थिति से होकर गुज़रते हैं| अम्मा को भी चिकित्सा बदलते रहने की शौक हैं| जिसकी वजह से रोग भी नहीं जाता और आर्थिक नष्ट भी होता हैं| इस तरह से बदल-बदलकर चिकित्सा करना मुश्किल बन जाती हैं और जब यह बात उन्हे समझाने की कोशिश की जाती है तो संत्रास उत्पन्न होने लगती हैं| उन्हें ऐसे लगता हैं कि परिवारवालों को उनके प्रति कोई लगाव नहीं हैं, यह झुंझलाहट वे हर बात पर उतारती हैं| उन्हें

यह भी लगता हैं कि उनकी बीमारी ठीक न होने का कारण, उनके डॉक्टर या ईलज की कमी के वजह से हैं| बूढ़ों का इस तरह का भ्रम पालना ही उनके ठीक न होने का प्रमुख कारण हैं क्योंकि यहाँ रोग शरीर से ज़्यादा मन को लगा हुआ है जो उन्हें और अधिक कमज़ोर कर देती हैं| उन्हें लगता हैं कि परिवार की सत्ता बहू-बेटों के हाथों चले जाने की वजह से ही उनके प्रति यह व्यवहार उभर रहा है| साथ ही साथ आर्थिक प्रभुत्व न रहने के कारण भी वे अपने को तुच्छ समझते हैं|इस विचार से उनके मन में संघर्ष और उथल-पुथल पैदा हो जाता हैं|उन्हें लगता हैं कि उनकी उपेक्षा की जा रही है जो उनमें आंतरिक द्वंद पैदा करती है| अपने को दूसरों द्वारा वृद्ध और अक्षम समझना उन्हें पसंद नहीं होता इसलिए वे अपने मान्यताओं को दूसरों पर थोपने की कोशिश करते हैं और अपने विचारों के अनुरूप दूसरों को चलाना चाहते हैं| मेरे घर का दूसरी समस्या यह ही रहीं| अम्मा अपना विचार उनके बेटे यानि की मेरे पति पर हर वक्त थोपना चाहती हैं, वे चाहती है कि हर कोई बात उनके हिसाब से ही किया जाए| बहुत कम उम्र में ही विधवा बन जाने के कारण उन्होने हर चीज़ अपने तरीके से किया हैं| लेकिन जब बच्चे बड़े हो गए तो बच्चों को अपनी मान्यताएँ और सोच होने लगी,जो अपने अम्मा के समझ से बिलकुल अलग हैं| दोनों के विचारों के बीच मेल न होने के कारण ही एक प्रकार का दरार भी पैदा हो गया है| घर की अवस्था कृष्णा सोबती की कहानी 'दादी अम्मा' की तरह कुछ-कुछ बन गया है| कहानी की दादी इसी मानसिक तनाव से गुजरती हैं| अपने समय में वे घर की मालकिन रही थी| लेकिन वृद्धावस्था तक पहुँचते-पहुँचते अधिकार नष्ट होने लगा| अब घर में उनके विचारों को सुननेवाला और माननेवाला कोई नहीं था जिसके कारण वह चिड़-चिड़ा बन जाती हैं-"और अम्मा तो सचमुच उठते-बैठते बोलती हैं,झगड़ती हैं, झुकी कमर पर हाथ रखकर वह चारपाई से उठकर बाहर आती हैं तो जो सामने हैं उस पर बरसने लगती हैं|"(कृष्णा सोबती,दादी अम्मा,सोबती एक सोहबत,पृ 152)

परिवार में माँ-बाप और बच्चों के बीच का संबंध ही मानव जीवन का आधार है| संबंध से कटकर कोई जी नहीं सकता है| लेकिन वृद्धावस्था में जब व्यक्ति ऊर्जा विहीन हो जाता है तो यहीं संबंध उसे भरी पड़ता है| वर्तमान समाज की नयी पीढ़ी अधिक सुख-सुविधाएं चाहते हैं और उसे जुटाने केलिए वे भाग-दौड़ कर रहे है| इस कारण वे अपने माँ-बाप केलिए बिलकुल वक्त नहीं निकाल पते है| इसके अलावा सामाजिक मूल्यों में होनेवाला परिवर्तन भी दोनों पीढ़ियों के बीच दरार पैदा कर रहा है| "पहले समाज में माता और पिता को देवता समान माना जाता था परंतु धीरे-धीरे पुराने मूल्यों की जगह नए मूल्यों ने ले ली और सामुदायिकता की भावना के स्थान पर व्यक्तिवाद पनपने लगा और युव पीढ़ी ने समाज के दबाव और डर को भी धीरे-धीरे मानने से इंकार का दिया|पहले संयुक्त परिवार प्रणाली में वृद्धों को एक स्थान होता था, उन्हें सम्मान मिलता था, उनके कुछ कहने का एक मूल्य होता था, परंतु आज एक एकल परिवार प्रणाली ही मुख्य रूप से समाज में दिखाई देती है, उसमें बड़े बुजुर्गों केलिए कोई स्थान नहीं रह गया हैं|(डॉ श्रीमती प्रेमसिंह व डॉ रिम्पी सिंह,समकलीन कहानी और उपेक्षित समाज,पृ 140) वर्तमान समय की यह बहुत बड़ी एक विडंबना है| जहाँ पाश्चात्य संस्कृति की 'use and throw culture' बुजुर्गों की उपेक्षा के एक कारण बना हुआ है, वहीं दूसरी ओर पीढ़ियों का अंतराल अथवा generation gap भी उनकी दुर्गति का प्रमुख कारण हैं| वर्तमान समय का माहौल जिस तरह से नयी पीढ़ी की मान्यताओं को बदलता है, उसी गति से पुरानी पीढ़ी की मान्यताओं को नहीं बदलती जिसकी वजह से दोनों पीढ़ियों के जीवन-मूल्यों के बीच गहरा अंतराल पैदा हो जाता है| परिणाम यह होता है कि नयी पीढ़ी के जीवन मूल्यों और दृष्टिकोण को बुजुर्ग नकारते है और पुरानी पीढ़ी के मूल्यों को मानना नयी पीढ़ी केलिए भी कठिन है| यह स्थिति दोनों के बीच संघर्ष खड़ा कर देती है| पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के बीच की यह बहुत बडी समस्या है कि उनके चिंतन और विचार मेल नहीं खाते| दोनों अपने-अपने विचारों में अटक रहते है क्योंकि दोनों केलिए अपने-अपने दृष्टिकोण सही है| अक्सर एक साधारण परिवार में यही सबसे बड़ी समस्या बन जाती है| इसके अलावा अपने घर में जो साम्स्य मैं महसूस करती हूँ, वह यह है कि परिवार में जितने भी लोग शामिल है, सब अपने-अपने कामों में व्यस्त रहते है| बहू-बेटों को घर और बाहर का काम संभालना पड़ता है, वे कम ही एक दूसरे केलिए समय निकाल पाते है और बच्चे अधिकतर समय पढ़ाई और कार्टून में गुजरते है| ऐसी स्थिति में घर के बुजुर्ग बिलकुल अकेले पड़ जाते है और खुद को उपेक्षित महसूस करते है| बच्चों की अनुपस्थिति उनकी भौतिक व भावनात्मक सुख-सुविधाओं को प्रभावित करती है| सीमित आवसीय स्थान ,आर्थिक समस्या और समय कि कमी,वृद्धों और युवजनों के बीच कठोरता बना देती है| शैक्षणिक प्रगति, संपर्कों का विस्तार तथा घर के बाहर नौकरी आदि के कारण युवापीढ़ी अपने बुजुर्गों की देख-भाल केलिए समय नहीं निकाल पाते है| आधुनिक संदर्भ में बुजुर्ग अपने अधिकार खोने भी लगे हैं और बदलते आर्थिक सामाजिक वातावरण में अपनेको ढाल पाने में असमर्थ हो जाते हैं| इसी अकेलेपन को झेलने केलिए कभी-कभी वृद्धजन अपनी शेष ज़िंदगी वृद्धश्रम में बिताने का निर्णय भी लेते हैं|

वृद्ध सदनों में जगह ठूंठने की वृद्धजनों के निर्णय को हम एक प्रकार से उनकी प्रतिरोधी स्वर के रूप में भी ले सकते हैं क्योंकि उनका यह निर्णय उनके बच्चों द्वारा समाज में निर्मिल खोखले प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाने का अच्छा मार्ग हैं| जो बच्चे घर परिवार में अपने माँ-बाप की उपेक्षा करते है,उनका समाज में प्रतिष्ठा होना निरर्थक ही है| जहां एक समय वृद्धजन अपने पर होते अत्याचारों और अपने एकांकीपन एवं उपेक्षा भरी ज़िंदगी को नियति समझकर झेल लेते थे वहीं आज के बूढ़े उसका प्रतिरोध करने लगे हैं| आधुनिक पीढ़ी के अपने प्रति पनपते नकारात्मक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए आजकल वृद्धजन जागरूक हो गए हैं| वे किसी भी प्रकार अपने बच्चों के दबाव में आने या उनपर निर्भर होना नहीं चाहते हैं|डॉ॰सतीशराजू पुष्करन की कहानी 'सही दिशा की ओर' में रिटायरमेंट के बाद अपने को फालतू न मानकर अपने आगे की ज़िंदगी को सही दिशा की ओर बढ़ाते अशोक बाबू का चित्रण हुआ है| घर पर व्यर्थ बैठने के बजाए वे घर के छोटे-मोटे कामों में लग जाते है और पत्नी के साथ रसोई में भी हाथ बढ़ाते हैं| अपने स्वास्थ्य कोभी ध्यान में रखते हुए वे सुबह सैर पर जाते है और हम उम्र के लोगों के साथ दोस्ती भी करते हैं|वर्तमान नयी पीढ़ी के मनोभाव को समझते हुए वे कहते हैं-"आजकल के बच्चे है·····.कभी खाली बैठे देखकर कुछ कह ही दे तो..... इससे पूर्व कि वे लोग कुछ कहे, हमें अपनी उम्र के हिसाब से अपनी उपयोगिता बनाए रखनी हैं|"(सं डॉ शीतांशु भरद्वाज,सही दिशा की ओर,वृद्धमन की कहानियाँ पृ 171)

हमने अधिकांश यही सुना और देखा है कि वार्धक्य के समय बच्चे अपने माँ-बाप को वृद्धाश्रम छोड़ रहे है,लेकिन अब स्थिति ऐसी है की बुजुर्ग खुद आश्रम चुनते हैं| अपने बचे-कूचे संपाद्य को बेचकर या वृद्धाश्रम के नाम लिखकर वे स्वयं वहाँ चले जाते हैं| इस तरह के प्रतिकृया के ज़रिए वे अपने बच्चों के प्रति जो नीरस है,वह जताते है और समाज के सामने उनका बना बनाया प्रतिष्ठा तोड़ देते हैं|कभी-कभी माँ-बाप के इस कठोर फैसले की वजह से ही बच्चे उनके प्रति अपना नकारात्मक दृष्टिकोण बदलने को मजबूर बनते है| मेरे घर में जब कभी किसी बात को लेकर झगड़ा होता है तो अक्सर मैंने अपने सासुमाँ को वसीयत बदलने की धमकी देते हुए सुना हैं|उन्हें लगता है कि ज़मीन उनके नाम होने की वजह से ही उनका मूल्य बना हुआ हैं और यह उनका सही तरीका भी हैं| ठीक इसी बात को उषा महाजन की कहानी 'अब्बूजी' के अब्बूजी अपनी मृत्यु उपरांत बच्चों को सिखाते हैं| जीते-जी कोई भी बेटा उनका ख्याल नहीं रखता और उनको अपनी आखिरी समय नौकरों के साथ बिताना पड़ा था| उनके मृत्यु उपरांत सारे बच्चे मिलकर धूमधाम से उनका 'चौथ' मानते है|उन्हें लगता है कि अब्बूजी की सारी संपत्ति उन्हें मिलनेवाला हैं|लेकिन ऐसा कुछ नहीं होता है| अब्बूजी ने अपनी सारी संपत्ति वृद्धाश्रम के नाम कर दी थी-"क्या कोई सपने में भी सोच सकता था कि अपने जाए तीन-तीन बेटों के होते अब्बूजी अपनी हाथों बनाई इस कोठी को आनंद वृद्धाश्रम को सौंप जाएंगे|"(उषा महाजन,अब्बूजी,सच तो यह है,पृ 32) तो कहने का तात्पर्य यह है कि आजकल के वृद्ध योजनबद्ध होकर अपने वार्धक्य को समय और संदर्भ के अनुसार मोड़ने लगे हैं| अपनेको आर्थिक रूप से सशक्त रखने के कारण ही वे बच्चों की गुलामी या शरण से अपने को दूर रखने में सक्षम हैं| वे अपनी ज़िंदगी खुद तय कर पा रहे हैं और अपने तरीके से जी भी पा रहे हैं|

मैंने अपने शोध केलिए समकालीन कहानियों को चुना था| आज जब मैं खुद इन समस्याओं से होकर गुजरती हूँ तो इन कहानियों ने और मेरे शोध विषय ने कई हद तक इससे झूझने की हिम्मत और समझ मुझमें प्रदान की है| मैं दावे के साथ कह सकती हूँ कि इस शोध कार्य ने मुझे अपनी खुद की ज़िंदगी में सही दिशा दिखने में बहुत अधिक मदद की है|

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Encyclopedia of Britannica
2. स्वाति तिवारी,अकेले होते लोग,पृ.31
3. गिरिराज शरण,पिता,वृद्धावस्था की कहानियाँ,पृ.44
4. स्वाति तिवारी,डर,अकेले होते लोग,पृ 103
5. शीतांशु भारद्वाज, कैस नंबर पाँच सौ सौलह,वृद्धमन कि कहानियां,पृ 54
6. कृष्णा सोबती,दादी अम्मा,सोबती एक सोहबत,पृ 152
7. डॉ श्रीमती प्रेमसिंह व डॉ रिम्पी सिंह,समकलीन कहानी और उपेक्षित समाज,पृ 140
8. सं डॉ शीतांशु भरद्वाज,सही दिशा की ओर,वृद्धमन की कहानियाँ पृ 171
9. उषा महाजन,अब्बूजी,सच तो यह है,पृ 32